PESQUISA –Peer Reviewed Journal ISSN-2455-0736 (Print)
www.pesquisaonline.net ISSN-2456-4052 (Online)

ब्राह्मण वर्चस्व के खिलाफ दलितों का संघर्ष

Dr. Joice Tom

Assistant Professor, Department of Hindi, Pavanatma College, Murickassery
tomjjunior@gmail.com

Abstract

समकालीन संदर्भ में दलितों के ऊपर वार्दातों की संख्या बढ रही है। यहाँ तक की 'दलित' शब्द की अस्मिता पर भी प्रश्नचिह्न लगा हुआ है। ऐसे माहौल में हिन्दी कहानियों में ब्राह्मणवादी वर्चस्विता के खिलाफ दलित संघर्ष के कुछ मिसाल छोडना समीचीन होगा।

Main Content

भारत की स्वतंत्रता प्रप्ति के सत्तर बरस गुज़र चुके हैं। भारतीय जनता के दलितोन्मुख विचार नीति परिवर्तन के अधीन है। फिर भी समकालीन भारत में ही रोहित वेमुला जैसी घटनाएँ बार बार घटती है। दलित होने के नाते बीच समाज में उनकी मार पिटाई होती है और यहाँ तक कि 'दलित' शब्द की अस्मिता पर भी राजनीतिक तौर पर वाद-विवाद अत्यंत गंभीर तरीके से ज़ारी है। एक तरफ दलित चेतना की यह सक्रियता समाजोद्धार के लिये आशावह है तो दलित भारत को जड से उघाडने की यह चाणक्य नीति वरेण्य समाज की एक जटिल साजिष देखना भी गलत नहीं है।

उम्मीद की बात यह है कि पिछले दो दशकों से दलित चिंतक और लेखक काफी सक्रिय है। भारतीय समाज को बुरी तरह से ग्रसित इस वरेण्य नीति को यधासंभव पहचानने में और उसके खिलाफ आवाज़ उढाने में वे पीच्छे नहीं है। ब्राह्मण वर्चस्विता के खिलाफ दलित जनता के प्रतिरोध के कुछ मिसाल नीचे अंकित है।

ओमप्रकाश वात्मीकि की 'ब्रह्मास्त्र' कहानी का पंडित एक दलित को नैथानियों की बारात में आने से रोकने के लिये हिकमत चलाता है। अपनी ज़िद को सही साबित कराने पंडित एक दफा शादी का बहिष्कार करने का ऐलान कर देता है -"आप को लगता है कि उसे ले जाना उचित और ज़रूरी है तो ले जाइये। लेकिन उस स्थिति में मैं नहीं जाऊँगा.....मुझे क्षमा कीजिये ....मैं यहीं से लौट जाता हूँ...वह डोम पढा-लिखा हैं उसी से शादी के संस्कार भी करा लेना।"[i] इस ब्रह्मास्त्र के सामने परिवारवाले अवाक खडे होते हैं। दलित के बिना भी बारात निकल सकती है लेकिन पंडित के बिना शादी कौन कराएगा। अपने सगे मित्र के माँ-बाप की परेशानी देखकर कंवल बारात से स्वयं अलग होता है।

राम निहोर विमल की 'अब नहीं नाचब' कहानी का पंडित विद्यासागर चतुरवेदी भी कुछ इस तरह की शोषण नीति अपनाता है। बरक्स इधर उसका निशान चूकता ही नहीं भस्मासुर को दिया गया वर समान अपने ही माथे का बला साबित होता है। मंगरू भगत अपने घर आये समधी की खातिरदारी केलिये अपने मालिक बाबुसाहब शेर सिंह के यहाँ थोडा गेहूँ मांगने जाता है। उसकी बदकिसमती से उस समय ठाकुर के यहाँ पं.विद्यासागर चतुरवेदी पधारे हुए थे, जो दलितों की प्रगति से सख्त नफरत करता था। वह टाँग अडाता है-"बाबु साहब हमारे पूर्वजों ने वर्ण व्यवस्था, छुआ-छूत और ऊँच-नीच की बातें खूब सोच समझकर ही बनाई हैं। इन चमारों को आप ठिकाने नहीं जानते ...मेहमानों को खिलाने केलिये आज गेहूँ

ISSN-2455-0736 (Print)
ISSN-2456-4052 (Online)

मांगने आया है, कल गाय का घी लेने आ जायेगा।.....चमारों की इज्जत जाने से गाँव की इज्जत नहीं जाती और जिस गाँव में चमारों की इज्जत हो, उसमें फिर हम लोगों की इज्जत नहीं हो सकती । यही अधर्म है, यही व्यवस्था का विरोध है और यहीं अनीति है।....चमारों शूद्रों और हम लोगों के बीच खाद्य-अखाद्य का भेद तो बनाये रहना ही होगा।"[ii]बेचारा बाबु साहब, जो सचमुच गेहूँ देने को राज़ी था, पंडित की बातों में फँसता है । दोनों मिलकर एक कहानी गढ लेते हैं कि अचानक गेहूँ देवता समान बोलने लगा कि वह स्वयं चमारों के घर जाना नहीं चाहती । करोडों देवी-देवताओं की लम्बी कतार में पं.विद्या सागर चतुर वेदी की अपनी देन-गेहूँ देवता । अब गेहूँ देवता नहीं आना चाहती हैं तो कौन क्या कर सकता है । बेचारा मंगरू सूनी हाथ लौटता है । लेकिन ईण्ट का जवाब पत्थर से देना तो कोई इन दलित किसानों से सीखे । 'गेहूँ देवता' अगर बोल सकती है, तो 'हल देवता' क्यों नहीं बोल सकती ? वे भी गढ लेते हैं अपनी कहानी जिसमें हल देवता भी बोलने लगती है । कहानी के अनुसार हल देवता बोलती है कि वह दलितों के हाथों से छुए जाना नहीं पसन्द करती हैं । खोदा तो पहाड था पंडित ने, पर निकली तो चुहिया ही । अब हल चलाये बिना खेती कैसे सम्भव है । आखिर बाबू साहब को अपनी पगडी उतार कर मंगरू के पैरों तले रखना पडता है उसे खेती केलिये राज़ी करने केलिये ।

रत्न कुमार साँभरिया की 'डंक' का पूजारी अपनी मनुवादी परम्परा को कायम रखने के लिये युवा दलित खेरा का कमर तक तोड देता है । पूजारी भक्त और भगवान के बीच का संवाददाता है । भक्तों को भगवान से मिलाना उनका काम है । लेकिन 'सताना पूजारी' का भगवान तो स्वयं लक्ष्मी तथा अपनी प्रतिष्ठा ही हैं । वह मनु को ही मानता है -"मनु की उक्ति है, शूद्र का धन संचय पीडाएँ पहूँचाता है । वक्त की शेर खिसक गयी, नहीं तो इस कुपात्र का सारा पैसा हडपकर उस के कानों में सीसा भरकर गाँव से खदेड देता।"[iii] सतना की बेटी की शादी के लिये खेरा ने ही धन उधार दिया था वह भी बिन ब्याज । लेकिन सतना के सम्मुख खेरा की रहमदिली कुछ भी मायने नहीं रखती । उसको ऐसा लगता है मानो वह उधार कहाँ 'जूतिये में खीर ओट ली हो' । सतना को देखकर खेरा ने अपनी कुरसी नहीं छोडी थी । जैसे मनुस्मृति में लिखा गया है इतनी बडी जुर्रत दिखानेवाले शूद्र की कमर दगवा देनी चाहिये । सतना रात के अन्धेरे में खेरा का कमर तोडकर अपने धर्म की रक्षा करता है । ब्राह्मण की धर्मान्धता पर यह कहानी अपना पंचा मारती है।

दलित शोषण की सबसे बडी विडंबना दलितों की यह नासमझ है कि वरेण्य समाज उनका शोषण कर रहे हैं। विमोचन का पहला पडाव रोग की पहचान है । खुशी की बात है कि दलित समाज उससे अवगत हो रहे हैं । ब्राह्मण या अन्य वरेण्य समाज की शोषणोन्मुखता को अपनी तूलिका के ज़रिये उजागर करने में दलित लेखक सक्षम हैं । सच है कि दलित कहानियों में ब्राह्मण कभी देवता नहीं बल्कि खूँखार दैत्य है, मगर मानव ज़रूर है । ब्राह्मणों की शोषण नीति घृणा से लैस है तथा छल-कपट की सभी मायनों को तोडनेवाली है । इसके खिलाफ दलित अवश्य संघर्षरत है, लेकिन न अमानवीय है, न बेरहम ।

REFERENCES

संदर्भ ग्रन्ध सूचि

1. ब्रह्मास्त्र, ओमप्रकाश वात्मीकि, वसुधा.58, पृ.234
2. अब नहीं नाचब, राम निहोर विमल, दलित साहित्य 2002, पृ.247
3. डंक, रत्नकुमार साँभरिया, वसुधा 58, पृ 226